

शिवरात्री पूजा

दिल्ली, ९/२/१९९१

शिवजी के लिए कहा जाता है कि वे बहुत सरल हैं और एकदम भोले हैं। इसलिए उनको जानना बहुत कठिन है। कुण्डलिनी का कार्य ही देवी का कार्य है। देवी ही इस चराचर सृष्टि को बनाती हैं और अन्त में आपके अन्दर कुण्डलिनी बनकर शिव तक पहुँचा देती है। शिव का पूजन करते वक्त याद रखना चाहिए कि शिव के गुणधर्म हमारे अन्दर विकसित हुए या नहीं। इसलिए सबसे पहले कुण्डलिनी की गति को समझ लेना चाहिए। जब कुण्डलिनी का जागरण होता है तो सर्वप्रथम वो आपके शरीर को स्वस्थ करती है। क्योंकि शरीर का भी स्वस्थ होना जरूरी है। इसलिए आपका चित्त पहले अपने शरीर पर जाता है। शुरूआत में सभी मुझे अपनी शारीरिक तकलीफों, बीमारियों के बारे में बताते हैं। कुछ हृष्ट पुष्ट लोग अपनी सांसारिक तकलीफ बताते हैं। जब हम लोग जागृत अवस्था में होते हैं तो हमारा चित्त इन सब चीज़ों की तरफ आकर्षित रहता है और इससे हम लोग काफ़ी तकलीफ में रहते हैं। जैसे जैसे आप सहजयोग में आयेंगे आप यही पायेंगे कि आप लोग अपने शरीर की सांसारिक चीज़ों की या मानसिक दुःखों की ही चर्चा करते हैं। इसलिए पहले ये व्यवस्था की गई थी कि शरीर की तरफ ध्यान ही नहीं देना चाहिए। उसको कष्ट देना चाहिए। अगर आप पलंग पर सोते हैं तो नीचे उतर कर तख्त पर सोईये। फिर तख्त से आप चटाई पर सोईये। फिर आप जमीन पर सोईये। फिर आप पत्थर पर सोईये। फिर आप दलदल में सोईये। ऐसे अनेक तरह से शरीर को पक्का बनाया जाता था जिससे शरीर बाद में कोई तकलीफ न दे। शरीर का आराम किसी तरह से मान्य न था। जैसे एक रात जागरण में यदि तकलीफ हुई तो सात रात जागरण करो, फिर तकलीफ हुई तो चौबीस रात जागरण करो।

उसी प्रकार खाने-पीने का भी। अगर मनुष्य को खाने की बहुत लालसा है तो आप एक दिन उपवास करो, फिर आप सात दिन उपवास करो, फिर आप चालीस दिन उपवास करो। जो आपको चीज़ पसन्द नहीं हो ऐसी चीज़ आप खाओ। और बाकी सब चीज़ आप छोड़ दो। यहाँ तक कि आप अन्न मत खाओ, सिर्फ फल खाओ, फिर अगर आपको कपड़ों का बहुत शौक है तो आप सादे कपड़े पहनो। फिर आप हल्के कपड़े पहनो। फिर आप हिमालय पर जाओ और वहाँ पूरे कपड़े उतार कर ठण्ठ में ठिठराओ। इसी प्रकार किसी को नखरा हो कि मुझे अच्छा घर चाहिए। मैं अच्छे घर के बगैर नहीं रह सकता। जैसे आजकल लोगों को बाथरूम अच्छा चाहिये। आजकल तो सब चीज़ें बहुत जादा आ गयी है। तो उतनी हम लोगों की इच्छायें, प्रवृत्तियाँ बढ़ गयी हैं। तो उधर हमारा चित्त जादा आ गया है। तो कहा जाता था कि अच्छा ठीक है आप बड़े महल में रहते हैं तो अब आप आकर के पहले झोपड़ी में रहो। फिर झोपड़ी में भी बाड़ा लगाते थे। उसमें भी वो अपने को असुरक्षित समझते थे। तो कहा जाता था कि, 'अच्छा, इसमें आप अपने को असुरक्षित समझते हैं, तो ठीक है आप जंगल में आ कर रहो या किसी तीर्थ स्थान में जाओ।'

जैसे की कोई निकला तो कांची का आदमी तीर्थ स्थान में जाएगा तो काशी जाएगा और काशी का जाएगा तीर्थ स्थान में तो कांची जाएगा। रास्ते में उसको शेर खा जायेंगे। शेर ने छोड़ा तो सांप काट लेगा। सांप ने छोड़ा तो मगर खा जायेगा और जब तक वो वहाँ पहुँचते हैं हज़ार में से एकाध आदमी वहाँ पहुँचेगा।

इस तरह से लोगों को छांटते-छांटते और फिर आत्मसाक्षात्कार की बातचीत की जाती थी। सहजयोग में उल्टा हिसाब किताब किया हुआ है। सहजयोग में न तो आपको घर छोड़ना है, न द्वार छोड़ना है, न ही खाना-पीना छोड़ना है, न ही वस्त्र का कोई बन्धन है, आप जैसे हैं ऐसे ही रहें। इसी अवस्था में आपकी कुण्डलिनी जागृत हो जायेगी। कुण्डलिनी इसी स्थिति में जागृत हो जाएगी। पहले तो एक हिरण का चर्म बिछा के उसपे बैठ के, साधना करके फिर आपकी तपश्चर्या होगी। उसके बाद आप बहुत दिन तक भूखे मरियेगा, एकदम आपकी हड्डियाँ निकल आयेगी। तभी फिर परीक्षा होगी, आपको उल्टा टांगा जाएगा। कुएं में डाला जाएगा। दो-तीन बार देखा जाएगा कि किस हालत में आप हैं। उसके बाद अगर आप जिन्दा रह गये तब फिर कहीं जाकर के चर्चा होगी।

अब सहजयोग में उल्टा कारभार है। पहले तो हमने ऊपर का शिखर बना दिया। खोल दिया शिखर, सहस्रार खोल दिया और सहस्रार खोल के अब कहा कि आप ही लोग अपने को ठीक करिये। लेकिन तो भी हम लोग समझ नहीं पाते की सहजयोग बहुत ही कठिन चीज़ है। जितनी सरल है उतनी ही कठिन है, शंकर जी जैसे। क्योंकि हमारे अन्दर अनेक नाड़ियाँ हैं और उन नाड़ियों को खोलने का एक ही तरीका है कि हमारा चित्त जो है वो इधर-उधर न उलझे। तो सहजयोग में ये तो कोई नहीं बताते कि तुम खाना-पीना छोड़ दो। तुम उपवास करो और तुम जाकर हिमालय में ठण्ड में बैठो। ये कोई नहीं बताता। लेकिन क्या करना चाहिए जिससे हमारी प्रगति हो? तो सबसे पहले हमें अपनी तरफ अन्तरमन करके विचार करना चाहिए कि यह मैं क्या कर रहा हूँ? जैसे कि अब आप कहीं गये और आपने देखा कि आपको सोने की जगह नहीं मिली, तो फौरन आप शिकायत करना शुरू कर देंगे कि, 'माँ हमें सोने की जगह नहीं मिली।' उस वक्त ये सोचना चाहिए, कि 'मैं ऐसा क्यों कह रहा हूँ? क्योंकि मैं अपनी शरीर के बारे में चिन्ता कर रहा हूँ कि मुझे सोने की जगह नहीं मिली। मुझे ठीक से जगह नहीं मिली और मैं अपना चित्त इसी में डाले जा रहा हूँ।' अब उस वक्त में ये सोचना चाहिए कि 'अच्छा हुआ कि मुझे जगह नहीं मिली। अब सो जैसे सोना है। अपने शरीर की ओर देखे नहीं। सो अब। यहीं सो। यहीं सोना होगा, तू सहजयोगी है। तुझे सोने के लिए अच्छी जगह क्यों चाहिए? दुनिया में कितने लोग हैं जो रास्ते पर सो जाते हैं। तू कौन बड़ा भारी हो गया कि तुझे सोने के लिए अच्छी जगह चाहिए? और लोग तो खड़े-खड़े भी सो जाते हैं। तू खड़े-खड़े क्यों नहीं सोता और फिर सोना भी क्या जरूरी है। अपने को समझा क्या है तू?' ऐसे अपने शरीर से प्रश्न पूछना चाहिए।

एकदम आफ़त आ जाये कोई एक बार खाना न खाये तो। मैंने देखा है कि आफ़त आ जाती हैं लोगों पर अगर एक बार खाना न मिले। अगर एक दिन खाना नहीं मिले तो बहुत अच्छा सोचना चाहिए 'अच्छा हो गया। मैं देखता हूँ तुझे क्या होता है तेरा। तू मर जायेगा क्या?' ऐसे शरीर को धिक्कारना चाहिए। खुद

ही अपनी तरफ से शरीर को धिक्कारना चाहिए। आजकल तो बहुत ही ज्यादा शरीर के चोचले निकल आए हैं। जैसे कि ये हमने कपड़ा पहना, तो उसका मैचिंग होना चाहिए। इस तरह की आधुनिक चीज़ें निकल आई हैं और उसके जो परिमाण हैं वो इतने ज्यादा कृत्रिम हैं कि हम लोगों को समझ नहीं आता कि हम लोग इस कृत्रिमता के पूरी तरह से गुलाम हुए जा रहे हैं। इसका मतलब ये नहीं कि आप विक्षिप्त हो जायें। इसका मतलब ये नहीं कि आप अजीब से कपड़े पहन कर घूमिये और इसका मतलब ये भी नहीं कि आप हिप्पी हो जाएं। समझ लीजिए कि किसी स्त्री को एक मैचिंग ब्लाउज नहीं मिला तो उसको तो लगता है कि वो गई काम से, बिल्कुल खत्म। पहले जमाने में कोई मैचिंग पहनता ही नहीं था। अब यदि उसे मैचिंग स्वेटर नहीं मिला तो बस आ गई आफ़त। कौन देखता है आपको कि क्या पहने हैं आप? और आप ऐसी कौन सी विभूति हैं कि आपको देखने से किसी का आज्ञा चक्र खुल जाएगा? या किसी का कोई यंत्र खुल जायेगा? की कोई ऐसी बात हो जाएगी। कुछ भी नहीं। उल्टे आपको देखने से तो कोई पकड़ ही जायेगा आदमी। कभी-कभी तो मैं आँख झुका के चलती हूँ। लोग कहते हैं कि, 'माँ, आप आँख क्यों झुकाते हों?' ठीक है, चलने दो। लेकिन हिम्मत भी करनी पड़ती है कि भई, ये आँख है इसको तो काम करना ही है और इसके काम बहुत है। लेकिन कलियुग में इतना आघात, इतना तो कभी नहीं हुआ।

इसी प्रकार कोई एक भी चीज़ शुरू हो जाए। अब जैसे विलायत में है कि आपके बाल बिल्कुल उलझे होने चाहिए। तो अब सब ऐसे बाल उलझे घूम रहे हैं। तुम सहजयोगी हो। तुम विशेष लोग हो। तुम ऐसे क्यों कर रहे हो? अपने को पूछना चाहिए कि 'मैं ऐसे क्यों करता हूँ? मैं अपने शरीर का इतना आराम क्यों देखता हूँ? मैं दुनिया के लोगों के साथ अपने को क्यों ऐसे बनाना चाहता हूँ। उसी तरह से मैं क्यों रहना चाहता हूँ। मैं तो एक विशेष हूँ।' पर विशेष कैसे होंगे? अगर आप कहीं गये। तो कमरे में सारे इधर पानी फेंक दिया, हम विशेष हैं। या कहीं भी बैठ के खाना खा लिया, हाथ नहीं धोये, हम विशेष हैं। विशेष का मतलब ये कि आपमें ये जो चित्त की चल-बिचल है उसे रोकना है। चित्त को लीन करना है चैतन्य में। फिर चित्त अगर इधर-उधर जाता रहे तो वो चैतन्य में कैसे लीन होगा?

आपके हृदय में जहाँ शिव जी का वास है वहाँ चार नाड़ियाँ हैं। उसमें से एक नाड़ी मूलाधार तक जाती है और उससे आगे नर्क है। तो कुछ लोग यही कहते हैं कि इसमें क्या खराबी है? लेकिन आप सहजयोगी हैं, आप नर्क काहे को जा रहे हैं? आपका रास्ता बन गया अब नर्क की ओर क्यों जा रहे हैं? तो अपनी ओर चित्त में ध्यान देना चाहिए कि मुझ ये वासना क्यों हैं मेरे अन्दर? क्यों हैं? किसलिए? जो मुझे नर्क की ओर ले जा रहे हैं। मैं तो एक कदम ऊपर रखे हुए हूँ और एक कदम कब्र में रखे हूँ। या तो कब्र में बैठ जाओ या ऊपर ही रह लो। अब चित्त जो है उससे कहना चाहिए कि तू कहाँ भाग रहा है? नर्क की तरफ जाना चाहता है क्या? उसकी दूसरी नाड़ी है, वो नाड़ी हमें इच्छाओं की तरफ ले जाती है। इसलिये बुद्ध ने साफ-साफ कहा था कि कोई भी इच्छा करना यही हमारी मृत्यू का कारण है। इसलिये हम बुढ़े हो जाते हैं और इसलिये हम बीमार पड़ते हैं। क्योंकि हमें इच्छा होती है। इसलिये इच्छा हमारी बिल्कुल खत्म

होनी चाहिए। लेकिन वो खत्म नहीं होती। एक शुद्ध इच्छा मात्र रहनी चाहिए। वो कैसे हो ? शुद्ध इच्छा इस तरह हो सकती है, कि आप सोचें मुझे इसकी इच्छा क्यों हो रही है ? इस इच्छा की ओर मैं क्यों दौड़ा जा रहा हूँ ? ऐसी मैंने अनेक इच्छाएं की, उससे मुझे क्या फायदा हुआ। तो जो कुछ भी मिला है उसी में आनन्द पा लेना ही एक सहजयोगी का कर्तव्य है। किसी को इच्छा हुई कि मैं माँ के बिल्कुल सामने जाकर बैठूँ या किसी की इच्छा हुई कि हम पहले वहाँ जाकर खड़े हो जायें। ऐसी इच्छा क्यों हुई। क्योंकि अज्ञान में यह नहीं जाना कि माँ हर जगह हैं। कहीं जाने की जरूरत क्या है ? तो शुद्ध इच्छा की जब आप इच्छा रखें तो जब कुण्डलिनी चढ़ती है तो ये जो इच्छा की नाड़ी नीचे की तरफ़ मुड़ी हुई है उसकी ऊर्ध्वगति हो जाती है। उसमें शुद्ध इच्छा भर जाती है। इच्छा मनुष्य करता है इस विचार से कि इससे मुझे सुख मिलेगा, आनन्द मिलेगा। पर मिलता कुछ नहीं। तो इस इच्छा को जो है आपको आनन्द में लीन कर देना चाहिए। क्योंकि शिव का तत्व जो है, आनन्द का तत्व है। उनका स्वभाव आनन्द है। इसलिए हर एक चीज़ में आनन्द खोजना चाहिए। तब किसी चीज़ की त्रुटि ही नहीं लगेगी। दोष देखना या हर एक चीज़ में, ये ऐसा होता तो अच्छा होता, बहुत लोगों की आदत है मैंने देखा। अब रास्ते से जा रहे हैं, तो कहेंगे कि यहाँ पर उन्होंने फूल क्यों नहीं लगाया ? फिर कहेंगे कि यहाँ पर से मार्ग दिखाने का ठीक से क्यों नहीं लगाया ? ये रास्ता ऐसे मोड़ पे क्यों नहीं ले आये ? अरे बाबा, आप म्युनिसिपाल्टी में हैं ? आपको क्या करना है ? जो है सो है। आप क्यों बड़बड़ कर रहे हैं ? लेकिन दूसरों के बारे में हमेशा कहेंगे। इस में ऐसा करने से ठीक होगा। उसमें ऐसे करने से ठीक होगा। वो जो आप सोच भी रहे हैं वो कार्यान्वित ही नहीं हो सकता। आपका कोई मतलब भी नहीं है उससे।

अब जैसे बहुत से लोगों में होता है, सिनेमा में गये। उसमें कोई सीन दिखा रहे हैं, कि एक आदमी जा रहा है और अब वो किसी पहाड़ी से गिरने वाला है। तो लोग कहेंगे, 'अरे अरे, कहाँ जा रहे हैं तुम ? गिर जाओगे।' अब वो तो सिनेमा में जा रहा है। वो क्या तुम्हारी बात सुन रहा है क्या ? उसी तरह से हर एक चीज़ का ठेका लेकर बैठते हैं और इस तरह से अपनी बुद्धि में भी पूरी तरह एक विचारों की श्रृंखला बना देते हैं। लेकिन जो कुछ आप देखते हैं वो देखना मात्र हो गया। एक कटाक्ष में भी निरीक्षण हो जायेगा और चित्त सा आपके अन्दर बन जाएगा। लेकिन वो देखना नहीं होता। उसे निरंजन देखना कहते हैं। उसमें कोई रंजना नहीं होनी चाहिए। ना उसके प्रति रिअॅक्शन ही नहीं होनी चाहिए। बस देखो, इस रिअॅक्शन का क्या फायदा ? वो ही जैसे मैंने बताया कि सिनेमा में कोई आदमी कुछ कर रहा है। तो कह रहे हैं कि तुम ऐसे मत करो। कोई सुन रहा है क्या तुम्हारा ? तो निरंजन देखना ये भी शिव का ही तत्व है। शिव के स्थान पर भी पहुँच गए और उनके मूर्ति के दर्शन भी हो गए, किन्तु जब तक उनका प्रकाश हमारे अन्दर नहीं आया तो सब व्यर्थ ही है।

अब तीसरी नाड़ी है उसमें प्रेम उभरता है। प्रेम माने मेरा बेटा, मेरी बहन, मेरा भाई, मेरा बाप, मेरा पति सब दुनिया भर की रिश्तेदारी। इसमें भी बहुत लोग उलझे रहते हैं। सहजयोग में आने के बाद भी मैं

सालों तक देखती हूँ वो छूटता ही नहीं उनका। वही वही बाते, वही वही बाते। 'मेरे भाई का ऐसा हुआ, तो मेरे बहन का वैसा हुआ, मेरा फलाना ऐसा, मेरा ठिकाना ऐसा। मेरे लड़के ने ऐसा किया, तो लड़की ने ऐसा किया।' अब ये कहना कि ये रिश्तेदारी वृथा है, तो ये तो बात ठीक नहीं। तो ऐसा ममत्व कि अपने बच्चों के लिए आप किसी का मर्डर भी कर दें, किसी को खत्म भी कर दें। कुछ भी कर सकते हैं इस ममत्व के लिए। कोई पत्नी के लिए, कोई प्रेयसी के लिए, तो कोई पति के लिए, इस कदर उसमें आदमी अपने जीवन को व्यर्थ करता है और उसके बाद देखते हैं कि जिनके लिए इतना किया वो ही आपके दुश्मन हैं। वो ही आपको सता रहे हैं। सबसे ज्यादा दुःख वो ही दे रहे हैं और आपको और भी ज्यादा दुःख इसलिए होता है कि इन्हीं के लिए हमने इतना किया और इन्होंने हमारे लिए क्या किया? अगर किसी के उपर जरा सा उपकार किया और उन्होंने आपको तकलीफ दी तो और भी दुःख लगता है कि, इसके लिए इतना करने पर इसने ये किया। तो पहले जमाने में कहते थे कि सबको त्याग दो। घर त्यागो, बच्चों को त्यागो, बीबी त्यागो, सब छोड़छाड़ के जंगल में जाकर एकांतवास करो। सहजयोग में ऐसा नहीं है। सहजयोग में ये हैं किसी को नहीं त्यागना है। सबको अपनाना है। क्योंकि सहजयोग एक व्यक्तिगत कार्य नहीं कि आप जा कर एकान्त में बैठ गए और तपस्या की और बड़े ऊँचे हो गये। तो क्या फायदा हुआ। आप अवधूत बन गये तो क्या फायदा हुआ। एक ऐसा आदमी हो जो अच्छा भाषण दे सकता है। हो सकता है कि थोड़ी बहुत चैतन्य की भी वर्षा कर सकता है। पर उससे सारा संसार तो ठीक नहीं हो सकता। हमें तो सारे संसार को ठीक करना है। तब ये सोचना चाहिए कि मैं क्यों अपनापन सिर्फ थोड़े ही सीमित लोगों में रखता हूँ? अब उसकी भी वजह है।

एक साहब थे, कहने लगे, 'वो मुझे बहुत अच्छे लगते हैं।' मैंने कहा, 'क्यों?' कहने लगे, 'उनके बाल बहुत अच्छे हैं।' तो मैंने कहा कि, 'आपको बाल अच्छे लगते हैं कि वो अच्छे लगते हैं?' फिर कोई कहेंगे कि, 'साहब, वो उनका हमारे साथ बर्ताव बहुत अच्छा है।' कोई अगर मिठी-मिठी बातें करते हैं तो वो अच्छे लगते हैं। कोई अगर ऐसे कपड़े पहनते हैं तो वो अच्छे लगते हैं। फिर 'ये हमारे दिल्ली के रहने वाले हैं।' फिर दिल्ली के बाद होगा कि नहीं भाई दिल्ली में तो रहते हैं पर ये पुराने दिल्ली वाले हैं तो और भी नज़दीक। फिर ये सब्जी मंडी के हैं। फिर सब्जी मंडी में जो हमारा बैल हमने जिससे खरीदा था वो और भी नज़दीक हो गये। और पता नहीं कहाँ तक चलता है। इनका नाई और हमारा नाई एक। और बड़े गले मिलेंगे, वा, वा! फिर तो मंबई वाले हैं, दिल्ली वाले हैं, फलाने हैं, ठिकाने हैं। अरे, आप अब विश्व के नागरिक हो गये। अब कहाँ बम्बई, कहाँ दिल्ली और कहाँ मद्रास! ये अगर आपके दिमाग में अभी भी बैठा हुआ है तो अभी आप सहजयोग को समझे नहीं। ये कब होगा? जब आपका ममत्व करुणामय नहीं होता है। करुणा के सागर, दया के सागर। करुणा के सागर में लीन होना चाहिए, तब फिर बराबर समझ में आयेगा कि किसे क्या समझना चाहिए? किस के साथ क्या करना चाहिए? और अछूता कैसे रहना चाहिए?

मैंने बहुत बार उदाहरण दिया है आपको की एक पेड़ में गर पानी छोड़िये तो उसका जो सत्व है वो पेड़ के हर शाखा में, हर पत्ते में, हर फूल में, हर फल में जाता है और लौट आता है। और नहीं लौटे तो वो उड़ जाता है। लेकिन अगर वो एक फूल में ही फँस जाये तो वो पेड़ भी मर जायेगा और फूल भी मर जायेगा। तो जिसे निर्वाज्य प्रेम कहते हैं, जो देवी के एक वर्णन में कहा जाता है कि उनका प्रेम निर्वाज्य होता है। और वो जब किसी के लिए कुछ करती हैं तो फिर उन्हें यह नहीं खयाल रहता कि ये कुछ किया गया या हुआ और उसने ऐसे क्यों किया? ऐसे नहीं करना चाहिए था। हो गया, गया, खत्म। वो चिपकता नहीं दिमाग में। और रात दिन वही गुनगुन नहीं लगी रहती। कोई भी चीज़ में उलझता नहीं मन क्योंकि वो करूणामय हैं। करूणा के सागर में लीन हो गया। और करूणा के सागर में जो लीन हो जाता है वो बस। अब कोई आ गया, उसको कोई तकलीफ है तो इसकी तकलीफ ठीक कर दो। अब वो जा कर बाद में छूरा लेकर भी आये, चाहे कुछ करे, ये विचार नहीं आता। तकलीफ हैं न आप ठीक कर दीजिए। इनको ये परेशानी है नं, ठीक कर दीजिये। हालांकि मैं जानती हूँ कि कुछ कुछ परेशानी में कोई अर्थ नहीं है, लेकिन तो भी बहुत गंभीरता से उसको सुनती हूँ कि, 'भाई क्या परेशानी है, बताओ। हाँ, फिर ऐसा है। फलाना है। छोटी-छोटी चीज़ें भी कोई बताये।'

अपने अपने दायरों से लोग मिलते हैं। उनके दायरे में मैं नहीं उतर पाती। अगर वो मेरे दायरे में नहीं उतर पा रहे हैं तो ये उनका दोष नहीं। उनको उतरना चाहिए। उनको इसी दायरे में उतरना चाहिए, जिसे करूणा कहते हैं। करूणा, करूणा के लिए होती है। वो किसी काम से, किसी मतलब से, किसी रिश्ते से नहीं होती। कोई होगा बड़ा आदमी, कोई होगा छोटा आदमी, कोई होगा रास्ते पर पड़ा हुआ भिखारी, कोई भी हो। करूणा ऐसी चीज़ हैं की वो जैसे की कहीं आपने देखा है की समुद्र है, कहीं भी गड्ढा हो जाये, पानी भर देता है। कहीं भी कोई त्रुटि हो, उसको भर देगा। इस तरह से करूणा का स्वभाव ही है की उसे दिखा की इनको ये तकलीफ हैं, तो अच्छा, चलो इसके आँसू पोंछ दो, उसके आँसू पोंछ दो, उसकी तकलीफ निकाल लो। वो इसलिये नहीं की कुछ उसे माँगना है, लेना है, मतलब नहीं। सिर्फ इसलिये की वो स्वभाव ही है। पानी का स्वभाव, सागर का स्वभाव।

तो वो 'स्व' भाव होने के लिए, स्वभाव शब्द भी कितना सुंदर है। स्व माने आत्मा। आत्मा का भाव। जब वो आत्मा का भाव आपके अन्दर आ जाये सिर्फ करूणा, फिर ये सब चीज़ टूट जायेगी कि दिल्ली रहने वाले, बम्बई रहने वाले, फलाना, ठिकाना, कुछ याद नहीं रहता। उसका महत्व नहीं रहता और हर आदमी क्या है वो जरूर आपको याद रहेगा कि ये कौन है? इसको कौनसी तकलीफ है? एकदम देखते ही याद आ जाएगा। नजर आपकी कहाँ गई? नजर अगर यह दूँड रही है, कि दिल्ली वाला कौन है, कलकत्ते वाला कौन है। अगर ये नजर आपकी दूँड रही है, कि ये करूणा कहाँ बही चली जा रही है। किस की ओर जा रही है भाई? किसकी ओर खिंच रही है मुझे। तो पता होगा कि कोई दुःखी आदमी है। कोई साधक बहुत बड़ा साधक होता है। एकदम हृदय खिंच जाना चाहिए उस आदमी की तरफ और ये करूणा आपको सुमति भी देती है और स्मृति भी देती है। क्योंकि जितनी निकटता करूणा से आती है, उतनी किसी भी

रिश्ते से नहीं आती। ऐसी विशेष चीज़ है करूणा और इस करूणा में अपने को लीन कर लेना। इस ममत्व को लीन कर लेना ही सहजयोग में उन्नति का मार्ग है। क्योंकि मैंने कभी नहीं कहा कि आप अपने बाल-बच्चे छोड़ दो, घर छोड़ दो और घर से निकल के आप अपना जितना पैसा मुझे ला कर दो। घर बेच दो, बिबी को भी बेच दो बच्चों को बेच दो और सब पैसा मुझे दे दो। ऐसे ही कहते हैं न साधु-संत, जो आजकल निकले हैं। लेकिन ये उल्टे हैं। सहजयोग हैं। आप जैसे भी हों जहाँ भी हों, अन्दर ही अन्दर बढ़ते जाओ। वो अन्दर देखे बगैर तो यह नहीं होगा। तो फिर ये सोचना है कि क्या मैं करूणामय हूँ? किसी को अगर कुछ है और उसे यह कहा इस बार नहीं हो सकता, तो बहुत बुरा मान जाते हैं। माने सारा ममत्व अपने ही बारे में हो। 'मुझे क्या मिलना है? मैं क्या पाऊंगा? मुझे क्या लाभ होगा?' लेकिन ममत्व बाहर नहीं। कौन, किस दशा में, कैसा भी हो करूणा अपना रास्ता खुद ही ढूँढ लेती है बड़ी सुन्दरता से और बड़ा आनन्ददायी है। करूणा का पाना, उसमें बहना और करूरा में अनेक तरह के कार्य होना, आनन्ददायी तो है लेकिन उस आनन्द में लोभ नहीं होता कि ये आनन्द मैं बार-बार पाऊँ। उसकी प्रचीति, कॉन्शसनेस नहीं होती। कर दिया, कर दिया। हो गया, हो गया। जैसे संगीत को सुन लिया, मजा आ गया, वहीं खत्म हो गया। उसी तरह से कोई काम है, कर दिया, खत्म। लीन हो जाती है।

अब चौथी जो हमारे अन्दर नाड़ी है वो अत्यन्त महत्वपूर्ण है हृदय में और वो चौथी नाड़ी कुण्डलिनी के जागरण से ही जागृत होती है और बाईं विशुद्धि से निकल के और मस्तिष्क में जाकर के कमल को खिलाती है। जब हमारा चित्त इन सब चीज़ों में लीन हो जाता है, तो इस कमल में जीव आ जाता है, इसमें शक्ति आ जाती है या ऐसा समझ लीजिए जैसे किसी पौधे में पानी पड़ जाये तो वो जैसे अपने आप बढ़ता है इसी प्रकार ऐसा शुद्ध चित्त जिस मनुष्य का हो जाता है उसके हृदय की कली खिलती है और वो कमल रूप हो कर के सहस्रार में छा जाता है। फिर उसका सौरभ, उसका सुगन्ध चारो ओर फैलता है। और ऐसा मनुष्य एकदम नतमस्तक हो जाता है, एकदम नतमस्तक हो कर के सबके सामने झुका रहता है। कोई अगर कहता है कि आपने बड़ा मेरा काम कर दिया, बड़ा चमत्कार कर दिया, तो वो चीज़ उसे छूती नहीं। जैसे कि आनन्द की लहरें बाहर की ओर तट पे जाकर के नाद करती हैं, किंतु वापस नहीं लौटती। उसी प्रकार जिस मनुष्य की ये स्थिति हो जाती है उसका सारा कार्य बाहर को निनाद करता है। आवाज करता है। उसका असर बाहर दिखाई देता है। तट पर। उसके अन्दर उसका कोई भी परिणाम नहीं आता। खयाल भी नहीं आता, विचार भी नहीं आता।

अब आप लोग कभी कभी आपने अभी आगत-स्वागत गाना शुरू किया, तो मैंने सोचा किसी और का कर रहे हैं क्या? मैं इधर-उधर देख रही थी। किसके लिये गा रहे हैं? किस का स्वागत कर रहे हैं? मुझे डर लगता है कि कभी मैं भी आपके साथ गाने न लग जाऊँ। कभी आप लोग मेरा जयजयकार करते हैं तब तो मुझे और भी ज्यादा डर लगता है कि मैं भी न कहीं 'जय माताजी' शुरू करूँ। वाकई ऐसे। छूता नहीं। जो भी आप कहते हैं, जो भी आपके निनाद हैं वो और दूसरे तट पर जा कर छू जाएंगे। मेरे तक छूते ही नहीं। मुझे आते ही नहीं। उससे हो सकता है, अन्दर बैठे देवी-देवता खुश हो जायें और चैतन्य को बहायें

या कुछ करें। उस तट पर पहुँच सकता है। पर जहाँ तक मेरा सवाल है, मुझे कुछ उसका आभास भी कभी नहीं होता कि आप मेरी जयजयकार गा रहे हैं। मैं शायद वहाँ हूँ ही नहीं। ये दशा है शायद। अभी इतनी पोषक ना हो आप लोगों के लिए। लेकिन एक बात जरूर है की आप जब स्तुति गाते हैं, देवता खुश होते हैं, आपके अन्दर के देवता भी प्रसन्न हो जाते हैं और आपके लिए अनन्त नाड़ियों से कितने तो भी तेजःपुंज ऐसे प्रकाश के किरण आपके अन्दर छोड़ते हैं। फोटोग्राफ्स में देखा होगा आपने। कितनी मेहनत करते हैं आपके लिए। तो आपके लिए भी बहुत आवश्यक है, कि वो जब हमारे लिए इतनी मेहनत कर रहे हैं तो हमें भी इस शुद्धता को पाना चाहिए। तो पहले जिस शरीर को हम धिक्कार रहे हैं, जिसको हम मान नहीं रहे, वो ही शरीर जा कर के एक यज्ञ हो जाता है। यज्ञ माने ऐसे कि अब हमारा शरीर है, हो रही है तकलीफ, तो ये तो तकलीफ होनी ही है, क्योंकि ये यज्ञ है न! अच्छी बात है। जैसे की काष्ठ का जलना यज्ञ में जरूरी है, उसी तरह इस शरीर का भी जलना यज्ञ में जरूरी है। लेकिन सहजयोग में सबसे बड़ी बात ये है कि ये जो कृत युग शुरू हो गया है, आपके पूर्व पूण्य से, आपको बहुत तकलीफ होती नहीं खास! सब चीज़ सामने आ के खड़ी हो जाती है। सब साक्षात्कार होते रहता है। आप कहते हैं चमत्कार हो रहा है। सब चीज़ आपको सुलभ में मिल जाती है। बहुत से काम आपके सरल-सहज हो जाते हैं। शोभना-सुलभ गति कहा जाता है कि आपके शोभायमान इस तरह के जीवन में अत्यंत सुलभता से आप इसे प्राप्त कर सकते हैं। कोई भी अशुभ काम करने की, अशोभनीय काम करने की जरूरत नहीं। तो ये एक इस तरह की बड़ी सूक्ष्म माया भी है। उसमें यह नहीं सोचना चाहिए कि यह सारे चमत्कार हमारे लिए इसलिये हो रहे हैं क्योंकि हम कोई बड़े भारी सहजयोगी हैं। लेकिन ये सोचना चाहिए कि ये चमत्कार इसलिए हो रहे हैं कि हमारे अन्दर विश्वास-परमात्मा के प्रति, शिव के प्रति और कुण्डलिनी के प्रति दृढ़ हो जायें। इसलिये चमत्कार हो रहे हैं और इसको दृढ़ता से करने का कार्य यही है कि हम अपने चित्त को शुद्ध करें क्योंकि शिव चित्त स्वरूप हैं। उनके चित्त की शक्ति को चित्ती कहते हैं। वो चित्त हैं। माने कि ये जो चैतन्य चारों तरफ हैं, आप जानते हैं, उस चैतन्य का जो चित्त है, वो शिव का प्रसाद है। जो शिव का तत्त्व है। माने सारे संसार में उनका चित्त फैला हुआ है और जब आप कहते हैं कि चमत्कार हो गया, ये चीज़ घटित हो गई तब ये जान लेना चाहिए कि ये जो चित्त है, जिसे हम चित्ती कहते हैं, उसने ये कार्य किया है। अणु-रेणु हर चीज़ में उनका चित्त है लेकिन चित्त का मतलब ये होता है कि वो साक्षी है। देख रहे हैं और कार्यान्वित जो है वो ब्रह्म-चैतन्य है। लेकिन जैसे कि संगीतकार आप देखते हैं, वो सामने को देखकर बजाता है। उसी प्रकार ब्रह्म-चैतन्य उस चित्त की दृष्टि को देख कर ही कार्यान्वित होता है। उस सृष्टि को, उस चित्ती को ब्रह्मचैतन्य जानता है और वो इस कार्य को तब करता है जब उस चित्ती को देख कर उसे वो ठीक समझता है।

जैसे कि अभी हम आयें। आते ही एक साहब आये थे, देखते ही एकदम हकपका गये। मुझे देखा, मैंने कुछ कहा नहीं, कुछ नहीं। सिर्फ मुझे देख कर के एकदम सकपका गये। उसी प्रकार, वो कुछ कहें या न कहें क्योंकि ब्रह्मचैतन्य ये देवी की शक्ति है और वो कार्यान्वित है और वो उस देखने वाले को जानती है

और उस शक्ति की पूरी समय यही लीला है कि उस देखने वाले को खुश रखना है। इसलिये कभी-कभी आप कहते हैं कि माँ ऐसे गड़बड़ क्यों हो गया। इसलिये हो गया कि वो जो चित्ती थी उसका रुख बदल गया था। अगर आप आज शिव की पूजा कर रहे हैं तो ये मैंने जो चार नाड़ियां बताई हैं उसकी ओर नजर करें। और जिस तरह से मैंने बताया है कि अपने को किस तरह से इन चार चीजों में लीन कर लेना चाहिए चित्त को। यह कोई बड़ी गहन बात नहीं है, लेकिन सूक्ष्म है और फिर आप मुझे बताइये कि इस तरह से अन्तर मन कर के जो आपने अपने साथ विचारणा की है, या तपस्या की है, या जो वार्तालाप किया है और जो अपने चित्त को शुद्ध किया है, उससे आप एकदम शिव के सागर में पूरी तरह से डूब गये हैं। ऐसी दशा आप सब पायें यही मेरी एक शुद्ध इच्छा है।